IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
Impact Factor: 7.53
Volume 4, Issue 2, July 2024

''समसामयिक व्यवस्था में परसाई–रचनावली की सार्थकता''

पूनम पाठक
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
अ. प्र. सिंह वि. वि., रीवा

लेखन का क्षेत्र भाषा का ही क्षेत्र होता है। लेखक जो कुछ भी करना चाहता है, भाषा के अतिरिक्त उसके पास कोई दूसरा साधन नहीं है। वह मात्र शब्द प्रयोग नहीं करता, शब्दों द्वारा एक वस्तु–संसार भी निर्मित करता है।[1] भाषा हमारी सोच और अनुभव को संभव बनाती है, उसे अनुशासित भी करती है। प्रत्येक युग में प्रत्येक लेखक के लिए अपनी एक निजी भाषा खोजनी होती है। सही अर्थो में भाषा की खोज अर्थो की खोज बन जाती है। भाषा मानवीय व्यवहार की एक अनिवार्य गतिशील प्रक्रिया है, केवल शब्दों का समुच्चय मात्र नहीं। इतिहास और समय की गतिशीलता के साथ–साथ हमारी चेतना और कलात्मक अनुभव की आवश्यकताओं में परिवर्तन होता है, समय और चेतना के साथ जुड़े इस परिवर्तन में समूचा मानवीय भाषिक व्यवहार ही बदल जाता है, एक अर्थ में भाषा अपना मिजाज और मुहावरा ही बदल देती है। भाषा और समाज की गतिशीलता सचमुच एक आश्चर्जनक तथ्य है किन्तु साहित्यिक इतिहास के ठोस साक्ष्य इसे पुष्ट करते है।[2] ठीक इसी अर्थ में भाषा को समूचे समाज की सम्पत्ति कहा गया है। निराला ने कहा था कि भाषा भावों की अनुगामिनी है भाषा बहती हुई और प्रकाशशील होती है। काडवेल ने अपनी कृति रोमांस एण्ड रियलिज्म में जीवन अनुभव भाषा और अभिव्यक्ति के स्वरूप का अध्ययन करते हुए अपना यही निष्कर्ष दिया है कि साहित्य की परम्परा भाषा की परम्पराएँ नहीं बल्कि सामाजिक परम्पराएँ होती है।[3] हर रचनाकार अपने समय की भाषा खोजता–यथार्थ की अभिव्यक्ति के लिये सहज और विश्वसनीय भाषा का निर्माण करना होता है– भाषा और अनुभव का द्वन्द्व लेखक के मन बराबर सक्रिय होता है तभी वह भाषा के माध्यम से अपने संवेदन को एक विशिष्ट अनुभव का रूप देने में सफल हो पाता है। लेकिन दुखद हादसा है। दरअसल जरूरत से ज्यादा साहित्यिक सरोकारों ने आज के लेखकों को जिस तरह की भाषा और कतिपय चुनिंदा विषय दे दिये हैं वे जीवन के व्यापक अनुभव का बहुत ही छोटा हिस्सा है। इतने कम लोगों तक संवाद की स्थिति आज के लेखक की है कि मात्र एक छोटा सा वर्ग जिसके साहित्यिक सांस्कृतिक सरोकार है, उन तक भी पूरे रूप में वह पहुँचता नहीं फलतः कोई जीवंत बहस और उत्तेजक किन्तु महत्वपूर्ण प्रश्नों पर सार्थक बातचीत के माहौल का सर्वथा अभाव सा है।

[1] परसाई रचनावली, खण्ड–4, पृ0 378
[2] हरिशंकर परसाई की दुनियॉ, डॉ0 मनोहर देवलिया, पृ0 02
[3] आंखन देखी, पृ0 306